बहुमुखी प्रतिभा की धनी महादेवी वर्मा : एक विश्लेषण/ **डॉ॰ रीना थामस** 138
मोहन राकेश के उपन्यासों नारी के विविध रूप/ **राजलक्ष्मी जायसवाल** 142
समकालीन हिंदी कविताओं में भूमंडलीकरण
('रुकती नहीं है नदी' के विशेष संदर्भ में)/ **डॉ॰ रंजित एम॰** 146
तुलसीदास और चंदरास के काव्यों में नवधा भक्ति/ **डॉ॰ रोहिणी पंडियन** 150
कुसुम अंसल के उपन्यास 'उदास आँखें' में निहित अकेलापन व अजनबीपन/
श्रीमती रोसमीना कुजूर, डॉ॰ गिरिजा शंकर गौतम 158
'झीनी-झीनी बीनी चदरिया' उपन्यास में चित्रित संघर्ष के विविध पक्ष/
डॉ॰ सपना शर्मा, पायल 163
अदम गोंडवी की कविता 'चमारों की गली' में दलित चेतना/
शगुन, प्रो॰ सुचित्रा मलिक 169
प्रेमचंद की कहानियों में मध्यमवर्गीय परिवार की स्थिति/
सुमलक अपुम, डॉ॰ शिवम चतुर्वेदी 177
सामाजिक परिप्रेक्ष्य में साहित्य/ **डॉ॰ सुनीता** 180
डॉ॰ दामोदर खड्से की कहानियों में व्यक्त वैयक्तिक चेतना/
स्वाति पाल, डॉ॰ पी॰ व्ही॰ कोटमे 184
उषा यादव के कहानी-संग्रह 'वह एक पल' में वृद्ध उपेक्षा/
पूनम सिवाच, डॉ॰ आशा सहारण 188
जिंदा मुहावरे उपन्यास में देश विभाजन की त्रासदी/
स्वालियाबेग आर॰ कोप्पल, प्रो॰ श्रीमती राजु एस॰ बागलकोट 193
संवेदनात्मक कहानियों की रचनाकार मालती जोशी : एक पाठ/ **डॉ॰ सिंधु एस॰एल॰** 196
'मेरा बचपन मेरे कंधों पर' में चित्रित बाल मनोविज्ञान/ **डॉ॰ अनिता रानी** 202
मानुष हौं तो वही 'रसखान' बसौं, ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन :
कृष्णभक्त कवि रसखान / **डॉ॰ अवधेश कुमार** 207
हिंदी साहित्य की प्रासंगिकता के प्रतिमान/ **डॉ॰ दीपक कुमारी** 213
साहित्यिक इतिहास और सामाजिक इतिहास का संबंध/ **अंजु बाला** 218
हिंदी कहानियाँ और विकलांगों की समस्याएँ/ **डॉ॰ पुनीत कुमार, छाया** 228
'दीवार में एक खिड़की रहती थी' का भाषा वैशिष्ट्य :
कथा कहन की नवीन शैली/ **रवि कुमार पाण्डेय, प्रो॰ सुचित्रा मलिक** 233
महिला आत्मकथाओं में यथार्थ की प्रासंगिकता/ **डॉ॰ राम किशोर यादव** 238
अमरकांत की कहानियों में सामाजिक समस्याएँ/ **सुदेश कुमारी** 243
कश्मीरी पंडित : कल, आज और कल/ **राहुल कुमार यादव, डॉ॰ रश्मि कुमारी** 246
उषाकिरण खान के कथासाहित्य में लोकजीवन की सामाजिक समस्याएँ/
अल्का कुमारी, प्रो॰ सुचित्रा मलिक 250
कार्यशील महिलाओं की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति का अध्ययन :
जिला हजारीबाग (झारखंड) के विशेष संदर्भ में/ **पुष्पा कुमारी, डॉ॰ राज कुमार** 256
राजस्थान री विरासत : लोकसंस्कृति/ **डॉ॰ वीणा छंगाणी, अम्बालाल चौधरी** 262

ISSN 0975-735X

जित खैंचे तित जाऊँ/ **डॉ॰ अंजली जोसफ** 265
प्रवासी साहित्यकारों का हिंदी साहित्य में अवदान/ **धर्मवीर** 270
हिंदी साहित्य में गीतिनाट्य परंपरा का वैशिष्ट्य/ **दिलीप कुमार** 277
रहीम का काव्य और उसकी प्रासंगिकता/ **डॉ॰ इकरार खान** 283
हिंदी भाषा व साहित्य के प्रचार-प्रसार में
हिंदी की साहित्यिक ई-पत्रिकाओं का योगदान/ **जूही त्रिपाठी** 288
हरियाणा प्रदेश के जंगम संप्रदाय के गीत संगीत में
सामाजिक संबंध एवं भावनाएँ/ **ज्योति** 293
गीतांजलि श्री के उपन्यास 'रेत-समाधि' में अभिव्यक्त स्त्री-संघर्ष एवं अंतर्द्वंद्व/
डॉ॰ प्रभात रंजन, मनोज खूँटे 296
कलचुरीकालीन अभिलेखों में साहित्य के विभिन्न आयाम/
प्रीतम, डॉ॰ आशारानी दास 302
हिंदी कल, आज और कल/ **डॉ॰ पूनम अग्रवाल** 309
मुक्तिबोध की कविता अँधेरे में : संवेदना के विविध आयाम/ **डॉ॰ प्रीति राय** 315
रामनरेश त्रिपाठी के साहित्य में राष्ट्रीय चेतना/
सरला माधव प्रसाद तिवारी, डॉ॰ दीपिका जैन 320
डॉ॰ माणिक विश्वकर्मा 'नवरंग' की रचनाओं में मानवीय मूल्य/
डॉ॰ (श्रीमती) कल्याणी जैन, श्रीमती संगीता शर्मा 324
समसामयिक परिप्रेक्ष्य में चंद्रकांता के उपन्यास 'अपने-अपने कोणार्क' की प्रासंगिकता/
शमीना टी॰, डॉ॰ शोभना कोक्काडन 329
मनीषा कुलश्रेष्ठ के कथासाहित्य में शिक्षा और सामाजिक परिप्रेक्ष्य/ **सुनीता रानी** 333
किन्नर का शब्दकोशीय अर्थ और परिभाषिक स्वरूप/ **डॉ॰ विजय कुमार पटीर** 338
विष्णु प्रभाकर के कथासाहित्य में पारिवारिक संबंधों का चित्रण/ **डॉ॰ विजयदीप सिंह** 344
नीत्शे और सार्त्र के दर्शन का तुलनात्मक तथा समीक्षात्मक अध्ययन :
अस्तित्ववाद के परिप्रेक्ष्य में/ **पूजा** 348
मीराबाई के पदों में संगीत : एक अध्ययन/ **डॉ॰ सरिता सैनी** 356
गायत्री महामंत्र का विवेचनात्मक अध्ययन/
राजेश कुमार, डॉ॰ प्रमोद कुमार दास, डॉ॰ विजय सिंह गुसाईं 363

ISSN 0975-735X

समकालीन हिंदी कविताओं में भूमंडलीकरण

('रुकती नहीं है नदी' के विशेष संदर्भ में)

डॉ॰ रंजित एम॰, सहा॰ आचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग
एम॰ई॰एस॰ कल्लटी कॉलेज, मन्नार्क्काड पि॰ओ॰, पालक्काड

इक्कीसवीं सदी का समय और समाज आधुनिक तकनीकी उपकरणों का युग है। उपभोक्तावाद और सूचना क्रांति की अंधी दौड़ में हमारे पारस्परिक प्रेम एवं सद्भाव की गठरी ढीली पड़ चुकी है। वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण के चमकीले नारों से हमारी मानवीय संवेदना को ग्रहण लग चुका है। बाजारवाद हमारे चारों ओर मायानगरी की तरह व्याप्त है। भूमंडलीकरण की बाजारवादी व्यवस्था और उपभोक्तावादी अपसंस्कृति की नई लहर ने बढ़ती महत्त्वाकांक्षाओं और अनियंत्रित अभिलाषाओं की गड़बड़ी में गरीब को बुनियादी अधिकारों से वंचित कर दिया है।

वर्तमान समय में कवि लगातार बुराईयों से जूझ रहा है और जब वह देखता है कि उसकी लाखों कोशिशों के बावजूद दुनिया सुधर नहीं रही है तो भी वह हिम्मत नहीं हारता है और दुनिया के अच्छे-अच्छे लोगों को किसी-न-किसी तरह से बचा लेना चाहता है। इसी संघर्ष में भयावह त्रासदी के बीच वह जीवन बिताता है। उसका सपना एक अच्छी दुनिया बनाने का है। भूमंडलीकरण और बाजारवाद हमारी संस्कृति को पूर्ण रूप से नष्ट कर चुका है। इसका सुंदर चित्रण 'विश्वास' कविता में दर्शनीय है–

रविवार को
सुबह सुबह मैंने
पड़ोसी से नमस्ते की
उसने सर हिला दिया, बात नहीं की
दूसरे ने
अखबार में मुह छुपा लिया।

जो समाज आपस में विश्वास रखकर आगे बढ़े, उसका हाल अब यह है। एक-दूसरे पर भरोसा नहीं करते हुए अपनी अपने घेरों में अड़े रहना सभी पसंद करते हैं। पुराने समाज के लोग और नए लोगों के बीच इसी के कारण मतभेद हो रहे हैं। कवि आगे बता रहा है, शायद वे चुप होंगे, मगर...

मुझे देखकर भी सभी नहीं देख रहे थे
मैं घर में सब जगह दिखाई दे रहा था
परंतु कहीं नहीं था
मेरे अंदर की बढ़ती हुई चुप्पी
किसी आतंकी विस्फोट से ज्यादा
भयावह थी।

ISSN 0975-735X

ग्लोबलाइजेशन के कारण पाश्चात्य संस्कृति और परंपरा, हमारी भारतीय संस्कृति में पैर पसार रही है, जिसकी वजह से आज हमारी भारतीय संस्कृति के मूल्यों में गिरावट आती जा रही है। आज संयुक्त परिवार की जगह एकाकी परिवार, अरेंज विवाह की जगह प्रेम विवाह होने लगे हैं। पाश्चात्य संस्कृति हमारे ऊपर इतनी हावी हो चुकी है कि हम अपने माता-पिता को हाय डैड, हाय मॉम कहने लग गए हैं, जबकि हम इनके शब्दार्थ पर जाए तो इसका अर्थ कुछ और ही निकलकर आ रहा है। मूल्यों का भूमंडलीकरण हमसे हमारी संस्कृति छीन रहा है।

20वीं से इक्कीसवीं सदी तक आते-आते दुनिया ने अपना चोला तेजी से बदला है। कोई भी अपने अंदर देखने और समझने तैयार है ही नहीं। कवि इसकी और सूचना 'विकल्प' नामक कविता में दे रहे हैं–

मन और अंतर्मन के बीच
एक पर्दा है झीना सा
खबर हो या इतिहास
हम अपने अंतर झाँकते नहीं
हर बार नंग धड़ंग सत्य
सामने खड़ा हो जाता है
हम आँखें मूँद लेते हैं।

आज का परिवेश ऐसा है कि जहाँ देखो वहीं लोग परेशान हैं। उनके बीच कब, कहाँ और क्या हादसा हो जाए किसी को कुछ पता नहीं। आतंकवाद का दानव जगह-जगह अपना दाँव लगाए बैठा है। इसलिए ही कवि कह रहे हैं–

आज आदमी निरंतर हारता ही जा रहा है
क्योंकि उसे कई युद्ध एक साथ लड़ने पड़ते हैं
झूठ इतना बड़ा होता जा रहा है
कि सत्य का खंडित टुकड़ा भी
सामने आने से कतराता है।

महानगरीय निर्माण और विकास के बिगुल के साथ खड़ी गरीबी की छोटी सिसकी का मुखर शब्द यहाँ सुना जा सकता है–

जब यहाँ पेड़ था/ चिड़िया फुदकती थी
मैना ठुमकती थी
....तब की बात कुछ और थी
अब धूप कड़कती है/ बारिश और तेज हवा से
खिड़कियाँ, दरवाजे काँप उठते हैं
धुएँ का मटमैला बादल/ बालकनी में मंडराता है
चूँकि, समय खिसक गया है/ नई सभ्यता आ गई है
उस सभ्यता में सब कृत्रिम है,/ कहें तो जीवन तक।

कवि आगे कह रहे हैं–

...अब यहाँ बचपन नहीं खेलता
जिंदगियों ने नए लिबास पहन लिए हैं

ISSN 0975-735X

बालकनियों गमलों में/ कृत्रिम फूल खिलते है
दरवाजे बंद रहते हैं/ और इतिहास बाहर झाँकता है।

समाज की वर्तमान स्थिति और धार्मिक मान्यताओं के बीच तालमेल की कमी [illegible] हैं। हर चीज को व्यावसायिक नजर से देखने की प्रवृत्ति के कारण ही यह हाल है। धर्म के [illegible] हो रही करतूतों की हँसी उठाते हुए कवि ने लिखा–

मंदिर में/ मैंने देखा–
पुजारी की नजरें/ व्यावसायिक के कामरे की तरह
स्थिर हो गई/ किसी भक्तिमती महिला के विशिष्ट
अंगों पर/ उसके हाथ में
पूजन एवं दान-दक्षिणा की सामग्री थी
वह आँख मूँदकर/ मूर्ति के सामने
निर्विकार खड़ी थी/ पुजारी की सुप्त भावनाएँ जाग रही थीं
परंतु भगवान् सो रहा था– इससे ज्यादा क्या टिप्पणी करना है?

वह जमाना लद गया जब विद्यार्थियों के चेहरे से ओज टपकता था और शरीर में [illegible] हुआ बल मुँह बोलता था। आज ओजहीन पीढ़ी हमारे सामने है और ऐसे में इस पीढ़ी से राष्ट्र [illegible] उम्मीदें रख सकता है? जीवन में क्या करना चाहिए? जीवन किस तरह जीना चाहिए? जीवन का ध्येय क्या है? आदि प्रश्नों का उत्तर बालकों के पास अन्य पशुओं के बरअक्स जन्मजात नहीं [illegible] उसे इनके उत्तर घर में, समाज में, ग्रंथों तथा व्यावहारिक संस्कृति के द्वारा मिलते हैं। किसी [illegible] को एक संस्कृति उदार बना सकती है तो अन्य संस्कृति क्रूर। एक को मानव, तो अन्य को [illegible] बना सकती है। कवि की व्यथा इन पंक्तियों में दर्शनीय है–

आजकल मेरा टिंकू/ कोई सवाल नहीं पूछता है
वह टॉम एंड जेरी, पाक्मान/ में उलझा रहता है
चाँद सितारों की बात नहीं करता
डब्लू डब्लू एफ की नकली कुश्ती
के दाँव सभी को दिखाता रहता है
वह दादा दादी से कहानियाँ
नहीं सुनता/ कंप्यूटर गेम में डूब जाता है।

बाजारवाद में बेचने वाले होते हैं, खरीदने वाले नहीं। हमारा पाठक यहीं ठगा जा रहा है। [illegible] जो कुछ यह कहकर पढ़ाया जा रहा है कि यह तुम्हारी पंसद है–दरअसल, वह उसको पसंद नहीं होती। जिस तरह एक ओर बाजार इच्छा सृजन कर रहा है, आपकी जरूरतें बढ़ी हैं और [illegible] चीजें हमारी जिंदगी में जगह बना रही हैं।

भारतीय ऋषियों ने लोकमंगल की कामना से द्रवित होकर मानवीय गुणों को दैवीय [illegible] से विभूषित करने के लिए संस्कारों को अत्यंत वैज्ञानिक एवं सार्वकालिक सार्वभौमिक व्यवस्था दी है। ऐसा नहीं है कि यह केवल भारतीयों के लिए ही उचित हैं अपितु किसी भी भू-भाग के मानवीय गुणों के उत्थान हेतु ये संस्कार समीचीन हैं। साम्राज्य भारत का साध्य नहीं वरन् साधन है। लेकिन आज हालात बदल रहे हैं। खुबालकर जी की राय है–

यह युग नियति का संत्रास है

ISSN 0975-735X

जो सच नहीं है/ उसे हम ओढ़ रहे है नित नए दिन
दुनिया बदलती जा रही है/ दावा भी है
वसुधैव कुटुंबकम् के स्थान पर/ 'ग्लोबलैसेशन' आ गया है।

वैश्वीकरण का प्रभाव शिक्षा के क्षेत्र में भी दर्शनीय है। आज हमारी शिक्षा प्रणाली ऐसे नौजवान तैयार कर रही है जिन्हें जीवन का उद्देश्य ही नहीं पता और इनकी तादाद अच्छी-खासी है। हमारे आस-पास सामाजिक प्रदूषण के जो मामले सामने आ रहे हैं, वे हमारी शिक्षा पद्धति पर बहुत बड़ा प्रश्नचिह्न है। इसका चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है–

सहस्राब्दी के प्लेटफॉर्म की/ सही पटरी पर
खड़ा होकर भी गलत हो सकता हूँ
...बुजुर्ग कहते हैं बेटा/ जमाने के साथ चलो
किस तरह चलना है/ यह नहीं बताया उन्होंने
एक चीज के दो पहलू हैं/ इनका व्यावहारिक भेद
स्कूलों में नहीं पढ़ाया जाता।

सब चराचर में अपने-आपको देखने की सलाह देते हुए पौराणिक समाज से हम बहुत दूर आगे आ चुके है। मगर लोगों के बीच की दूरियाँ कम करने में हम सक्षम नहीं हुए हैं। अपने बच्चों को पूरी दुनिया को शक की नजर से देखने की सलाह हम दे रहे हैं। इसके फलस्वरूप आए परिवर्तन का वर्णन इस प्रकार किया है–

शहर की भीड़ में/ अजनबी बन जाता है हर कोई
फिर भी परिचय बढ़ाते नहीं है लोग
किसी कवि ने वैश्वीकरण के बारे में लिखा था–
वैश्वीकरण' की आँधी आई,/ कमर तोड़ रही है महँगाई,
'सेज' की नीति नवीन है,/ किसानों से छिन रही जमीन है...
'विनिवेश' का यह तूफान,/ आत्महत्या कर रहे किसान
'साम्राज्यवाद' की रणभूमि में,/ हारा फिर से हिंदुस्तान।

ऐसे हारे हुए समय में भी हम चुप रह रहे हैं। खुबलकर जी की प्रार्थना दुहराते हुए मैं यह लेख समाप्त करना चाहूँगा–

तुम सब/ चुप क्यों रहते हो?
बिखेर दो/ चारों ओर चुभती संवेदनाएँ

संदर्भ

1. डॉ. उमाकांत खुबालकर, रुकती नहीं है नदी, शिवांक प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, 2009
2. हिमांश, भूमंडलीकरण और हिंदी सिनेमा, हिंदी बुक सेंटर, 2014
3. भूमंडलीकरण के दौर में हिंदी, अरविंद दास 17.09.10 बरगद
4. कुमुद वर्मा, भूमंडलीकरण और मीडिया, ग्रंथ अकादमी दिल्ली
5. अभय कुमार दुबे, भारत का भूमंडलीकरण, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2016
6. पुष्पपाल सिंह, भूमंडलीकरण और हिंदी उपन्यास, राजकमल प्रकाशन 2012

Mob. 938744 1300
ranjutkr@gmail.com

ISSN 0975-735X

शोध दिशा

ISSN 0975-735X

विश्वस्तरीय शोध-पत्रिका

केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा से अनुदान प्राप्त

UGC APPROVED CARE LISTED JOURNAL

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्यता प्राप्त शोध पत्रिका

शोध अंक 62/5 अप्रैल-जून 2023 400.00 रुपए

संपादकीय कार्यालय

हिंदी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार,
बिजनौर 246701 (उ॰प्र॰)
फोन : 0124-4076565, 09557746346
ई-मेल : shodhdisha@gmail.com
वैब साइट : www.hindisahityaniketan.com

क्षेत्रीय कार्यालय

हरियाणा
डॉ॰ मीना अग्रवाल
ए-402, पार्क व्यू सिटी-2 सोहना रोड,
गुड़गाँव (हरियाणा)

दिल्ली एन॰सी॰आर॰
डॉ॰ अनुभूति
सी-106, शिवकला अपार्टमेंट्स
बी 9/11, सेक्टर 62, नोएडा
फोन : 09958070700

(सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।)

संपादक
डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल
07838090732

प्रबंध संपादक
डॉ॰ मीना अग्रवाल

संयुक्त संपादक
डॉ॰ शंकर क्षेम
डॉ॰ प्रमोद सागर

उपसंपादक
डॉ॰ अशोककुमार
09557746346
डॉ॰ कनुप्रिया प्रचण्डिया

कला संपादक
गीतिका गोयल/ डॉ॰ अनुभूति

विधि परामर्शदाता
अनिलकुमार जैन, एडवोकेट

आर्थिक परामर्शदाता
ज्योतिकुमार अग्रवाल, सी॰ए॰

शुल्क

आजीवन (दस वर्ष): छह हजार रुपए
वार्षिक शुल्क : एक हजार रुपए
यह प्रति : चार सौ रुपए

प्रकाशित सामग्री से संपादकीय सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका से संबंधित सभी विवाद केवल बिजनौर स्थित न्यायालय के अधीन होंगे। शुल्क की राशि 'शोध दिशा' बिजनौर के नाम भेजें। (सन् 1989 से प्रकाशन-क्षेत्र में सक्रिय)

स्वत्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल द्वारा श्री लक्ष्मी ऑफसैट प्रिंटर्स, बिजनौर 246701 से मुद्रित एवं 16 साहित्य विहार, बिजनौर (उ॰प्र॰) से प्रकाशित। पंजीयन संख्या : UP HIN 2008/25034

संपादक : डॉ॰ गिरिराजशरण अग्रवाल

संपादक
डॉ. गिरिराजशरण अग्रवाल
डॉ. मीना अग्रवाल
शोध दिशा
62
ISSN 0975-735X
UGC APPROVED CARE LISTED JOURNAL

मेकअप लगे राजेंद्र कृष्णन के चेहरे से पसीने की बूंदें टपकने लगीं। भले ही सब कुछ मिट्टी में मिल जाए-मैं और मेरा सूत का कारखाना, मेरी पत्नी की शिकायत, कण्णनकुट्टि के अंतिम सांस लेते वक्त लोगों का ताली बजाना-सब, लेकिन उस अजनबी का हँसी अब भी जारी है-"बेटा कण्णनकुट्टि तुम अब नहीं बचोगे।"

अचानक सपने से जाग उठा तो डिब्बे में बहुत शोर सुनाई पड़ा। एक तमिल लड़की का भाई एक हिंदी फिल्म का गाना गा रहे थे। वे लोग अब हाथ फैलाकर सामने आएंगे उस लड़की के चेहरे पर एक निर्वेद भाव भी होगा। ट्रेन अनेक जगहों को पीछे छोड़ते हुए आगे की ओर बढ़ रही थी। झरोखे से जंग की धूल तथा रेल की गंदगी को लिए हवा भी अंदर आ रही है।

उस हवा से उसे खेत की कीचड़ की बदबू आई।

मूल : आशा. के
अनु. डॉ. रंजित. एम.

फिर बूंदा-बाँदी

उसने पर्दे के पीछे से देखा, नाटक खत्म होते ही सब लोग हॉल से वापस जा रहे थे। अब उसकी जान में जान आई। इतनी देर कैसे गुजरी... सोचा भी नहीं जा सकता। पद के पाठ ही खड़ा देख रहा था कि कोई शोर तो नहीं मचा रहा, एकटक... जिंदगी में पहली बार।

उसे लगा कि आँखें मूंदे जा रही हैं। दो तीन दिनों की नींद बाकी है। सिर दुख रहा है। ठंडे पानी से मुँह धोया... थोड़ी तसल्ली हुई। फिर भी नींद नहीं छूटी।

हॉल लगभग खाली हो चुका था। सभी अभिनेता अपने सामान बाँध रहे थे। मंच के एक ओर से वेणु सर आ रहे थे। उसने आशा के साथ सर के चेहरे की ओर ताका।

"नाटक बहुत अच्छा रहा। इतना मैने नहीं सोचा था। हरी का भविष्य उज्ज्वल होगा।"

सर बोलते जा रहे थे... नाटक की कमियों, कॉलेज में एक नाटक क्लब होने की जरूरत आदि के बारे में। सर ऐसे ही बातूनी ढंग के आदमी हैं। उन बातों से उसे कोई मतलब नहीं है, तो भी वह नापसंदी नहीं दिखाता था। सर से कुछ कहने का साहस नहीं था, उसमें।

वह सोचता था कि इस एक महीने में वह सर के कितना करीब आ गया है। अकेलेपन से दम घुट रहा था तभी सर की यहाँ बदली हुई। तब तक कहने लायक कोई दोस्त उसका नहीं था। वह अपनी निजी जिंदगी में किसी और को दखल देने नहीं देता था।

वापस जाते वक्त सर मुड़कर कहा, "शाम को कमरे में आना, कुछ किताब दे दूंगा।"

उसने हामी भरी। ।सर के दूर निकलने तक वह देखता रहा। धूप उतर रही थी। सब लोग जा चुके थे। कमर का छत से कबूतर शोर मचाते हुए उड़ गए।